5

प्राकृतिक वनस्पति एवं वनाश्रित समुदाय

आप में से कुछ विद्यार्थी वन के नज़दीक रहते होंगे और वृक्ष, पौधे, झाड़ियाँ, पहाड़, जानवर, पक्षी और कीड़े–मकोड़ों के बारे में भी जानते होंगे। उनसे अनुरोध करें कि वे कक्षा में सबको वनों के बारे में विस्तार से बताएँ। यह भी बताएँ कि वे वनों में क्या–क्या करते हैं?

क्या आपने कभी जंगल से लकड़ियाँ, पत्तियाँ और फल–फूल एकत्रित किया है? कक्षा में उन अनुभवों के बारे में चर्चा करें। उन वस्तुओं की सूची तैयार करें जिन्हें लोग जंगल से लाकर अपने दैनिक जीवन में उपयोग करते हैं। उनका क्या–क्या उपयोग होता है?

पिछली कक्षाओं के विभिन्न पाठों में हमने वनों के बारे में और वहाँ रहने वालों के बारे में पढ़ा। उन बातों को याद करें।

धार्मिक पुस्तकों तथा लोक कथाओं में अक्सर वनों का उल्लेख आता है। उनमें से कुछ कहानियों को कक्षा में सुनाएँ।

कुछ लोग वनों को देवी–देवताओं का निवास मानते हैं। उनके बारे में पता करें और कक्षा में सबको बताएँ।

सभी विद्यार्थी वन का चित्र बनाएँ और एक दूसरे से मिलान करें।

वन

वनों के बारे में लोगों में अलग–अलग धारणाएँ हैं और उनका महत्व भी अलग–अलग होता है। कुछ लोग वन से डरते हैं, उनका कहना है वनों में बड़े–बड़े पेड़–पौधे जंगली जानवर– शेर, भालू, साँप, बिच्छु इत्यादि होती है। ऐसे भी लोग होते हैं जिन्हें वनों से भय नहीं लगता और उनके बच्चे भी निडर होकर घने वनों में घूमते और खेलते हैं। कुछ लोग वनों की सुन्दरता से प्रभावित होते हैं या उसे पूजनीय मानते हैं, तो कुछ और लोग वनों को आर्थिक संसाधन मानते हैं जिससे उद्योगों के लिए कच्चा माल जैसे–इमारती लकड़ी, बाँस, तेन्दू पत्ता आदि मिलते हैं।

वनों का उपयोग भी अलग–अलग तरीके से होता है। कुछ लोग वनों में छोटी झोपड़ी बनाकर निवास करते हैं। जंगलों में रहकर छोटे जानवरों का शिकार करके तथा फलों को एकत्रित कर अपना पेट भरते हैं। कुछ लोग अपने पालतू जानवरों को जंगल में ले जाकर चराते हैं। कुछ लोग जंगलों में पर्यटन के लिए जाते हैं तो कुछ लोग पेड़ों को काटकर वहाँ खेत,खदान या उद्योग स्थापित करना चाहते हैं।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि न केवल हम मनुष्य ही जंगल का उपयोग करते हैं बल्कि पेड़–पौधे, घास–फूस, चिड़िया, कीड़े–मकोड़े, आदि भी जंगलों में पनपते और बढ़ते हैं। जब भी हम जंगलों के बारे में विचार करें तो इन सबके हितों के बारे में भी सोचना होगा।

जंगल या वन क्या है? इनको परिभाषित करने के कई तरीके हो सकते हैं।

सबसे पहले कक्षा के सभी विद्यार्थी वन की अपनी–अपनी परिभाषा लिख लें। फिर सब उन्हें पढें और देखें कि कितनी अलग–अलग तरह की परिभाषाएँ हो सकती हैं।

फिर सब मिलकर वनों के बारे में उन बातों की सूची बनाएँ जो मनुष्य और वन्य जीवों के लिए उपयोगी हो।

दरअसल वनों की कोई एक परिभाषा नहीं हो सकती। हम वनों को किस रूप में देखते हैं, उससे उसकी परिभाषा तय होती है। उदाहरण के लिए हम यह कह सकते हैं – ''वृक्षों एवं झाड़ियों से ढंके विस्तृत भूभाग को वन कहते हैं।'' इससे यह प्रश्न उठता है कि कितना बड़ा भूभाग? पेड़ों से ढके होने का क्या मतलब है? कितना घना? क्या एक रबर या सागौन या नीलगिरी का रोपण (प्लांटेशन) भी वन है? क्या हम वनों को उनमें रहने वाले कीड़े–मकोड़े, जानवर, पक्षी और मनुष्यों के बिना पूर्ण मान सकते हैं? किसी भी परिभाषा के साथ हम इस तरह के प्रश्न कर सकते हैं।

फिर भी हमें वनों के बारे में किसी समझ को लेकर आगे बढ़ना होगा। इस तरह हम कह सकते हैं कि अधिकांश वनों में निम्नलिखित बातें देखी जा सकती हैं :–

1. एक विशाल क्षेत्र – कई किलोमीटर लम्बा और चौड़ा।
2. पेड़ और अन्य वनस्पति जैसे– घास, झाडियाँ, पौधे, लताएँ आदि जो मनुष्य के हस्तक्षेप के बगैर उगते और बढ़ते हैं।
3. व्यापक जैव–विविधता जहाँ विभिन्न तरह के जीव–जन्तु मनुष्य के हस्तक्षेप के बिना प्राकृतिक रूप से रहते हैं व प्रजनन करते हैं।
4. भारत के जंगलों में कई जनजातीय समुदाय रहते हैं जिन्होंने अपने आप को उन जंगलों के अनुरूप ढाला है और जंगलों में कम से कम हस्तक्षेप करके जीवन व्यतीत करते हैं।

हमारे आसपास जो वन हैं उन पर क्या ये बातें खरी उतरती हैं?

क्या हमें लगता है कि वन महत्वपूर्ण हैं? अगर खेती, सड़क, खनन, उद्योग या घर बनाने के लिए हम सारे वन काट देंगे तो क्या होगा? क्या हम वनों के बिना नहीं रह सकते ? कक्षा में चर्चा करें।

वन कितने प्रकार के होते हैं और वे कहाँ पाए जाते हैं?

वन कहाँ पाए जाते हैं? इस सवाल का उत्तर जटिल है क्योंकि, हज़ारों साल पहले, वन लगभग पूरी पृथ्वी पर जहाँ कहीं मिट्टी, सूरज की रोशनी और वर्षा होती हो, वहाँ व्याप्त थे। अतः ध्रुवीय प्रदेशों, ऊँचे बर्फीले पर्वतों, रेतीले या चट्टानी प्रदेशों और कम वर्षा वाले रेगिस्तानों को छोड़कर पूरी धरती वनों से ढकी थी। जब से मनुष्य खेती करने लगा और वह गाँवों व शहरों में रहने लगा तब से वनों की कटाई शुरू हो गई। जो इलाके खेती, खदान, बगान, उद्योग आदि के लिए उपयुक्त थे वहाँ तेज़ी से वनों का सफाया हुआ। 20वीं सदी की शुरुआत तक वन उन्हीं इलाकों में बचे रहे जो खेती लायक नहीं थे जैसे–पहाड़ी, पथरीले, दलदली इलाके। ये इलाके रहने लायक नहीं थे या आबादी के क्षेत्रों से दूर थे।

क्या यह कहना सही है कि वन प्राकृतिक रूप से दुर्गम पहाड़ और पथरीले प्रदेशों में ही होते हैं?

हमारे आसपास वन कहाँ हैं? पता करें कि वहाँ के वन अभी भी खेत, खदान या शहरों के लिए क्यों नहीं कटे?

वनों का वर्गीकरण– वनों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जा सकता है– वनों की सघनता के आधार पर, उनमें पाई जाने वाली वनस्पितियों के आधार पर या प्रशासनिक व्यवस्थाओं के आधार पर। वनों की सघनता के आधार पर वनों को इन श्रेणियों में बाँटा जाता है –बहुत घने वन, घने वन, खुले झाड़ी वन, विकृत वन आदि।

प्रशासनिक वर्गीकरण– वन विभाग की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के आधार पर वनों को 3 वर्गों में विभाजित किया जाता है, आरक्षित वन, रक्षित वन और अवर्गीकृत वन।

'आरक्षित वन'– शासकीय वन हैं जहाँ न कोई पेड़ काट सकता है न जानवर चरा सकता है न घरेलू उपयोग के लिए वनोपज ले सकता है। हमारे देश के 54.4 प्रतिशत वन इसके अन्तर्गत आते हैं।

'रक्षित वन'– इस प्रकार के वनों में पशुओं को चराने, घास काटने, जलाऊ लकड़ी बीनने, लघु वनोपज इकट्ठा करने की सुविधा दी है। हमारे देश के 29.2 प्रतिशत वन इसके अंतर्गत आते हैं।

'अवर्गीकृत वन'– इनमें पशुओं को चराने तथा लकड़ी काटने की छूट दी जाती है। भारत में 16.4 प्रतिशत वन इस प्रकार के हैं।

वनों को उनमें पाए जाने वाले पेड़ों के आधार पर भी वर्गीकृत किया जाता है। किस तरह के पेड़ कहाँ प्राकृतिक रूप से उगेंगे, यह वहाँ के तापमान, वर्षा और मौसम के चक्र से निर्धारित होता है। उदाहरण के लिए चीड़ और देवदार जैसे कोणधारी पेड़ केवल बहुत ठण्डे प्रदेशों में पाए जाते हैं जहाँ बर्फ भी बहुत गिरता है और साल भर नमी रहती है। ये पेड़ साल भर हरे रहते हैं। यदि सालभर नमी रहे मगर तापमान ठण्डा न होकर गर्म रहे तो वहाँ दूसरी तरह के पेड़ होंगे। ये फलदार चौड़ी पत्ती वाले पेड़ होते हैं जो साल भर हरे रहते हैं लेकिन गर्म प्रदेश जहाँ वर्षा कुछ ही महीने होती है वहाँ सागौन जैसे पेड़ होते हैं। गर्मी के महीनों में इनके पत्ते झड़ जाते हैं और बारिश में फिर से आ जाते हैं।

अतः वनों का वर्गीकरण वहाँ की जलवायु और उगने वाले पेड़ों के आधार पर भी किया जाता है। इस आधार पर भारत में वनों को निम्नलिखित भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन

उष्णकटिबन्ध
जहाँ अधिक गर्मी पड़े और वर्षा अधिक हो

सदाबहार
सालभर हरे रहने वाले

इस प्रकार के वन ऐसे प्रदेशों में होते हैं जहाँ साल भर गर्मी रहती है और अधिकांश महीनों में वर्षा भी होती है। वर्षा की मात्रा प्रतिवर्ष 200 से.मी. से अधिक होती है। यहाँ पेड़ों के पोषण और वृद्धि के लिए साल भर गर्मी और नमी मिलती है। यहाँ के वन बहुत घने होते हैं और उनमें अनेक तरह के पेड़, पौधे, लताएँ, पेड़ों पर उगने वाले पौधे आदि होते हैं।

ये साल भर हरे रहते हैं क्योंकि पत्ते झड़ते ही उनमें नए पत्ते आते हैं। इन वनों में

चित्र 5.1 : केरल के सदाबहार वन

चित्र 5.2 : बस्तर के साल वन – आर्द्र पतझड़ वन

जानवर बहुत मिलते हैं। भारत में ऐसे वन पश्चिमी घाट के अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों, लक्षद्वीप, अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह, असम के ऊपरी भागों तक सीमित हैं। यहाँ की प्रमुख वनस्पति है – बाँस, बेंत, जामुन, गुरजन, सेमल, कदम, हल्दु, शीशम, आम आदि।

2. मानसूनी पतझड़ वन

मानसूनी वन भारत के विशिष्ट वन हैं। हमारे देश के लगभग 70 प्रतिशत वन इस प्रकार के हैं। ये वन उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं जहाँ गर्मी भी पड़ती है और साल के कुछ महीने ही वर्षा होती है। वर्षा की मात्रा 75 से.मी. से 200 से. मी. तक होती है यानी न बहुत कम न अधिक। इन पेड़ों की पत्तियाँ चौड़ी होती हैं ये पेड़ गर्मी के सूखे दिनों में नमी बचाने के लिए अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं ताकि पत्तियों से होने वाले वाष्पीकरण को रोका जा सके। बाद में इनमें फिर से पत्तियाँ निकल आती हैं। सूखे महीनों में पत्तियाँ झड़ने के कारण इनको पतझड़ वाले वन भी कहते हैं। हमारे राज्य में अधिकांश वन इसी श्रेणी में आते हैं। मानसूनी वनों को वर्षा के आधार पर दो भागों में बाँटा जा सकता है – अधिक वर्षा वाले आर्द्र मानसूनी वन और कम वर्षा वाले शुष्क मानसूनी वन।

आर्द्र मानसूनी वन– ये वन 100 से 200 से.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। इनमें पेड़ ऊँचे होते हैं। कुछ बड़े और सदाबहार पेड़ होते हैं। इनके नीचे झाड़ियाँ व लताएँ भी होती हैं। ये वन मुख्यतः छत्तीसगढ़ के अधिकांश भाग, पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, ओडिशा, आदि राज्यों में पाए जाते हैं। यहाँ के प्रमुख वृक्ष साल, सागौन, शीशम, आँवला, नीम, आम व चन्दन हैं। इनके अलावा खैर, कोसम, अर्जुन आदि वृक्ष भी होते हैं। आर्द्र मानसूनी वन सदाबहार वनों की तुलना में अधिक सघन नहीं होते हैं और पेड़ों की ऊँचाई भी अपेक्षाकृत कम होती है।

हम अपने आसपास के वृक्षों को देखकर उनकी सूची बनाएँ और ज्ञात करें कि वे सदाबहार हैं या पतझड़ वाले हैं। याद रहे कि सभी पेड़ों के पत्ते झड़ते हैं, लेकिन पतझड़ वाले पेड़ ही कई महीनों बिना पत्तियों के रहते हैं।

शुष्क मानसूनी वन –शुष्क (सूखे) मानसूनी वन उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं जहाँ वर्षा की मात्रा कम अर्थात् 70 से 100 से.मी. के बीच होती है। इनमें अधिकांश पेड़ों के पत्ते गर्मी में झड़ जाते हैं। ये वन कम घने होते हैं और इनमें पेड़ों के नीचे झाड़ियाँ कम होती हैं जिस कारण यहाँ ज़मीन पर घास उग आती है। ये वन पंजाब, हरियाणा, पूर्वी राजस्थान, गुजरात, पश्चिम मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक के अधिकांश क्षेत्रों में पाए जाते हैं। यहाँ के प्रमुख वृक्ष सागौन, तेन्दू, पलाश, खैर, महुआ तथा शीशम हैं। इन क्षेत्रों के बहुत बड़े भाग के जंगलों को कृषि कार्य हेतु साफ कर दिया गया है।

चित्र 5.3 : गर्मी के महीनों में सागौन वन की स्थिति

3. काँटेदार झाड़ी वाले वन

जिन भागों में वर्षा की मात्रा 70 से.मी. से कम होती है वहाँ काँटेदार झाड़ियाँ और पेड़, जैसे – बबूल, बेर, खैर आदि वृक्ष पाए जाते हैं। ये वन सघन नहीं होते पेड़ दूर–दूर होते हैं जिनके बीच में घास और काँटेदार झाड़ियाँ होती हैं।

ऐसे वन राजस्थान, हरियाणा, गुजरात के मरुस्थलीय क्षेत्रों में पाए जाते हैं। वर्षा की कमी के कारण इन वनों में काँटेदार झाड़ियाँ और कँटीले वृक्ष ही उगते हैं। वृक्ष छोटे और कम मोटाई के तने वाले होते हैं।

4. समुद्र तटीय वन

समुद्र के किनारे ज्वार–भाटे के कारण खारा समुद्री जल चढ़ता–उतरता रहता है। ज़मीन और पानी में नमक की मात्रा बहुत अधिक होती है। इस कारण यहाँ विशेष तरह के वन पाए जाते हैं जिन्हें मैनग्रोव वन कहते हैं (मैनग्रोव को हिन्दी में वायुशिफ, आशंकुफल और चमरंग कहा जाता है)। इस तरह की वनस्पतियों की जड़ें विशेष प्रकार की होती हैं जो समुद्री पानी के उतार–चढ़ाव को झेल पाती हैं। गंगा और ब्रह्मपुत्र नदी के डेल्टा वाले भागों में सुन्दरी नामक वृक्ष पाया जाता है। इसे समुद्री वन भी कहते हैं। यहाँ प्रमुख वनस्पति सुन्दरी, केवड़ा और मैनग्रोव है।

5. पर्वतीय वन

पर्वतीय क्षेत्रों में तापमान की कमी तथा ऊँचाई के साथ–साथ प्राकृतिक वनस्पति में भी अन्तर दिखाई देता है। सबसे अधिक ऊँचाई पर कोई वनस्पति नहीं होती है और यहाँ साल भर बर्फ रहती है। उससे नीचे जब गर्मी के महीनों में बर्फ पिघलती है तो मुलायम घास उग आती है। उससे भी निचले इलाकों में सदाबहार कोणधारी वन होते हैं जिनमें चीड़ और देवदार के पेड़ प्रमुख हैं। उससे भी नीचे मिला–जुला जंगल होता है, जिसमें चीड़ के साथ–साथ चौड़ी पत्ती के वन भी पाए जाते हैं। यहाँ के चौड़ी पत्ती के वनों में बांझ और बुरांश प्रमुख हैं। हिमालय के पूर्वी भाग में पश्चिमी भाग की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है। यही कारण है कि पूर्वी हिमालय पर अपेक्षाकृत सघन एवं विविध प्रकार की वनस्पति मिलती है।

चित्र 5.4 : हिमालय के देवदार वन

छत्तीसगढ़ में वन क्षेत्र

हमारे देश का 23 प्रतिशत भाग वनों के अन्तर्गत आता है। यह माना गया है कि यह अनुपात कम है और यह कम से कम एक तिहाई होना चाहिए। हमारे राज्य में लगभग 44 प्रतिशत भूमि पर जंगल है।

जो वन हैं उनमें से लगभग 43 प्रतिशत सरकार द्वारा आरक्षित वन हैं। यहाँ लोग जंगल का कोई उपयोग नहीं कर सकते हैं। 40 प्रतिशत संरक्षित वन हैं जहाँ लोग वनोपज एकत्र कर सकते हैं और अपने पशु चरा सकते हैं। बाकी 17 प्रतिशत वन अवर्गीकृत हैं यानी लोग बिना किसी रोक के उनका उपयोग कर सकते हैं।

चित्र 5.5 : वनों पर आश्रित लोग

चित्र 5.6 : वनों पर आश्रित लोग

छत्तीसगढ़ में मानसूनी जलवायु के कारण मानसूनी पतझड़ वन पाए जाते हैं। जशपुर, सामरीपाट, पूर्वी बघेलखण्ड तथा दण्डकारण्य के इलाकों में आर्द्र मानसूनी पतझड़ वन पाए जाते हैं जबकि छत्तीसगढ़ के मैदान तथा राज्य के पश्चिमी भाग में मानसूनी शुष्क पतझड़ वन पाए जाते हैं। हमारे राज्य में चार तरह के वन हैं – साल वन, सागौन वन, मिश्रित वन और बाँस वन।

साल वन – बस्तर को साल वन का द्वीप कहा जाता है। जशपुर, बिलासपुर, कांकेर, गरियाबन्द में भी साल वन पाए जाते हैं।

सागौन वन – राज्य की दूसरी प्रमुख वनस्पति सागौन है। कवर्धा (चिल्फी घाटी), नारायणपुर (कुरसैल घाटी) में उत्तम सागौन वृक्ष पाए जाते हैं। कांकेर, सुकमा, दन्तेवाड़ा, डोंगरगढ़ और अम्बागढ़ में भी सागौन वन पाए जाते हैं।

मिश्रित वन – आँवला, हर्रा, बहेड़ा, साजा आदि यहाँ की प्रमुख वनस्पति हैं। महानदी बेसिन इसके अन्तर्गत आता है। छत्तीसगढ़ के मैदान के जशपुर, कटघोरा, खरसिया, महासमुन्द आदि में ये वन पाए जाते हैं।

बाँस वन – सरगुजा वन मण्डल तथा कांकेर वन–वृत्त कटंग बाँस के लिए प्रसिद्ध हैं।

वनों का उपयोग और संरक्षण

पिछले 150 वर्षों में हमारे देश में वनों की बेतहाशा कटाई हुई है जिसके फलस्वरूप आज केवल 23 प्रतिशत भूमि पर वन बचे हैं। ये वन भी सम्भवतः पर्याप्त रूप से घने नहीं हैं। इसके कई कारण रहे हैं। सबसे प्रमुख कारण बढ़ते शहरीकरण और औद्योगिक विकास है। लकड़ी, बाँस आदि की आवश्यकता बढ़ने के कारण बहुत तेज़ी से वनों को काटा जा रहा है। वन विभाग का एक काम है अवैध कटाई रोकना और एक योजना के तहत बूढ़े पेड़ों को काटना और बेचना, लेकिन लगातार यह दबाव रहा है कि विभाग अधिकतम आमदनी कमाए। वर्ष सन् 1980 के आँकड़ों से पता चलता है कि पूरे देश के वन विभागों ने वनोपज बेचकर वन विभाग के सारे खर्च निकालने के बाद देश को 1,54,728 करोड़ रुपयों का फायदा पहुँचाया था। केवल अविभाजित मध्य प्रदेश से 49,509 करोड़ रुपयों का फायदा बताया गया है।

इससे हम देख सकते हैं कि हाल तक वनों का व्यावसायिक दोहन किया जाता रहा है। ये तो रही वैध कटाई की बात इसके अलावा निजी ठेकेदार वनों की बेतहाशा कटाई करते रहते हैं ।

दूसरा कारण यह रहा है कि हमारी बढ़ती आबादी को पिछले 60 साल के विकास के बाद भी हम वैकल्पिक आजीविका नहीं उपलब्ध करा पाए हैं। परिणामस्वरुप इस बढ़ती आबादी के पास खेती करने के अलावा और कोई चारा नहीं रहा। खेती बढ़ाने का एकमात्र उपाय रहा है वनों को काटना। आमतौर पर यह दबाव उन लोगों पर पड़ा जो सबसे

गरीब थे और जिनके पास शिक्षा या और कोई आजीविका का साधन नहीं था। जो लोग खेती करने के लिए साधन नहीं जुटा पाए वे जंगलों में जानवर चराकर गुज़ारा करने लगे। इसका भी जंगलों पर विपरीत प्रभाव पड़ा।

देश में जो विकास हुआ वह भी वनों के लिए अक्सर खतरा ही बना। सड़कों व रेल लाइनों के लिए वनों का काटा जाना आम बात है या फिर बाँधों व खदानों के लिए वनों की बलि चढ़ाई गई। इन सब का अंजाम यही हुआ कि देश में वनों का अत्यधिक नुकसान हुआ।

हमने इस अध्याय की शुरूआत में देखा कि वनों का अलग–अलग तरह के लोग अलग–अलग तरह से उपयोग करते हैं। एक ओर आदिवासी हैं जो सदियों से इन वनों में रहते आए हैं और उनको नुकसान पहुँचाए बिना उनका उपयोग करते आए हैं। जब उन्होंने वनों में खेती भी की तो वे झूम खेती का तरीका अपनाते थे जिससे खेत पर कुछ वर्षों के उपयोग के बाद फिर से जंगल को पनपने दिया जाता था। वनों का उपयोग सामूहिक रूप से और नियमों के तहत किया जाता था। आदिवासी जब कभी वनोपज बाज़ारों में बेचते थे तो वह मुनाफा कमाने के लिए नहीं बल्कि परिवार के भरण पोषण के लिए था। इससे वनों का अंधाधुंध उपयोग या उसे हानि पहुँचाने का काम नहीं होता था। जब भारत में अँग्रेज़ों का शासन स्थापित हुआ तो वे बड़े पैमाने पर लकड़ी का व्यापार करने लगे और जंगल काटकर खेती करवाने लगे ताकि उनकी आय बढ़े। इससे जंगलों को नुकसान पहुँचा और आदिवासियों के पारम्परिक खेती और वनोपयोग के तरीके अव्यवहारिक होते गए। जंगलों को तेज़ी से कटते देखकर अँग्रेज़ी सरकार ने वन विभाग बनाया और वन विभाग ने सारे वनों का नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया। आदिवासी जो पहले सामूहिक रूप में वनों के मालिक थे, अब जंगल में शिकार करने या वनोपज एकत्र करने पर गुनहगार बनाए गए। अँग्रेज़ यह कहने लगे कि ये अशिक्षित आदिवासी ही जंगलों का नाश कर रहे हैं और जंगलों को उनसे बचाना होगा।

'राष्ट्रीय वन नीति' और 'वन अधिकार अधिनियम, सन् 2006'

पिछले 150 वर्षों से आदिवासी विभिन्न तरीकों से संघर्ष करके जंगल पर अपने अधिकारों के लिए लड़ते रहे हैं। इन संघर्षों के फलस्वरूप सन् 1988 में केन्द्र सरकार ने 'राष्ट्रीय वन नीति' की घोषणा की। इस नीति में माना गया कि वनों के संरक्षण और विकास में आदिवासियों और ग्राम समुदायों की अहम भूमिका होगी। उसके अनुसार वनों का उपयोग इस तरह करना होगा जिससे वनों के आसपास रहने वालों को रोज़गार मिले। इस नीति ने यह भी स्वीकारा कि आदिवासी और अन्य वनाश्रित समुदायों को अपनी ज़रूरतों के लिए वनों का उपयोग करने का अधिकार है। इस नीति के तहत 'संयुक्त वन प्रबन्धन कार्यक्रम' चलाए गए जिनके अन्तर्गत आदिवासियों को जंगल से चारा, जलाऊ लकड़ी व लघु वनोपज इकट्ठा करने का अधिकार मिला और वन विभाग के तहत रोज़गार भी मिला लेकिन साथ–साथ उन पर दबाव बनने लगा कि वे खेतिहर ज़मीन पर अपना अधिकार छोड़ दें ताकि वहाँ पेड़ उगाए जाएँ। इसी समय देश के विभिन्न हिस्सों में बाघ को बचाने के लिए बाघ अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यान स्थापित किए गए जिससे लाखों आदिवासी बेदखल हुए।

इस बीच देश भर में आदिवासियों की बढ़ती बदहाली पर चिन्ता होने लगी और सन् 2006 में संसद ने लम्बे विचार और वाद–विवाद के बाद 'वन अधिकार अधिनियम, सन् 2006' पारित किया। इस अधिनियम ने पहली बार यह स्वीकार किया कि पिछले सन् 200 वर्षों में आदिवासियों को उनके अपने वनों पर पारम्परिक अधिकारों को न मानकर उनके साथ अन्याय किया गया। यह भी स्वीकार किया गया कि वनों का संरक्षण या विकास आदिवासियों के अधिकारों की बहाली के बगैर सम्भव नहीं है।

इस कानून के द्वारा आदिवासियों व जंगल के अन्य पारम्परिक उपभोक्ताओं को वनों पर उनके पारम्परिक अधिकार और जिस भूमि पर वे खेती कर रहे थे उन पर उनका स्वामित्व दिया गया। अगर इस कानून का सही तरह से अमल हो तो आदिवासियों व वनों पर आश्रित अन्य लोगों पर सदियों से किए गए अन्याय की समाप्ति हो सकेगी।

इस कानून के बनने के समय कई लोग जो वन संरक्षण के पक्षधर थे उन्होंने चिन्ता जाहिर की थी कि इसका दुरुपयोग हो सकता है। कुछ लोग अपने अधिकारों का घरेलू उपयोग की जगह व्यावसायिक उपयोग कर सकते हैं जिससे

वनों के और तेज़ी से कटने की सम्भावना हो सकती है। इसके विपरीत अन्य लोगों का मानना था कि आदिवासी जो सदियों से वनों की रक्षा करते आ रहे हैं उनके अधिकार सुरक्षित होने से वे जंगलों की रक्षा हमसे बेहतर कर सकते हैं।

कक्षा में चर्चा कीजिए –

- **क्या हमें लगता है कि वन अधिकार कानून सन् 2006, वर्षों के अन्याय को समाप्त कर सकेगा।**
- **यह वनों की रक्षा में किस प्रकार मददगार होगा?**
- **इसके लिए अन्य क्या–क्या कदम उठाने होंगे ?**

अध्यापक की मदद से वन अधिकार अधिनियम, सन् 2006 के कुछ प्रावधानों को समझने का प्रयास करें। इसके द्वारा वनों का उपयोग करने वाले समुदायों के कई अधिकारों को मान्यता दी गई है।

1. वन में निवास करने वाली अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासियों के किसी समुदाय या किसी सदस्य द्वारा निवास या आजीविका के उद्देश्य से स्वयं खेती करने के लिए व्यक्तिगत या सामूहिक रूप में ज़मीन रखने का अधिकार।
2. निस्तार के अधिकार।
3. पारम्परिक रूप से संग्रहित लघु वनोपज को एकत्र करने व बेचने और उन पर स्वामित्व का अधिकार।
4. अन्य सामुदायिक अधिकार, जैसे– मछली व जलाशयों के अन्य उत्पाद, मवेशी चराने सम्बन्धी अधिकार।
5. आदिम जनजातियों तथा कृषि पूर्व समुदायों के आवास और गृहनिर्माण के अधिकार।

वन संरक्षण के लिए सामुदायिक प्रयास ('दामोदर' ने बदली वन क्षेत्र की दशा)

परिवेश

जगदलपुर से तकरीबन 45 कि.मी. की दूरी पर एक गाँव है सन्ध करमारी। साल और मिले जुले पेड़ों से घिरे जंगल के बीच–बीच में धान के खेत फैले हुए हैं। जंगल और खेतों से घिरे इस गाँव की सीमा ओडिशा से सटी हुई है। यूँ तो अधिकांश सीमा कुरुन्दी नामक छोटी नदी से बनती है, लेकिन कुछ हिस्से पर मेंड़ भी बनी हुई है। गाँव की बसाहट काफी बिखरी है जिसमें सात–आठ समुदायों के लोग बसते हैं।

धान के खेत फैले होने के बावजूद गाँव की सीमा में काफी हिस्सा जंगल का है जिसमें से कई नदी–नाले बहते हैं। हम किसी भी दिशा से गाँव में प्रवेश करें, हमें खेतों के बीच–बीच महुए के पेड़ खड़े नज़र आते हैं जो इन खेतों को एक अलग पहचान देते हैं। सैकड़ों ताड़ के पेड़ भी हैं जहाँ रोज़ सुबह व्यापारी ताड़ी इकट्ठा करते नज़र आते हैं।

बरसात के साथ ही मछली पकड़ने का मौसम भी आता है। इस मौसम में खेतों में मिलने वाली चुनचुनिया, चौलाई, कोचई (अरवी) वगैरह यहाँ के भोजन का हिस्सा हैं। साल के पेड़ों से मिलने वाली खुमी (कुकुरमुत्ता) और बोदा भी चाव से खाया जाता है। मौसम के अनुसार लोग पाँच तरह के जिमीकन्द (रतालू) भी जंगल से लाते हैं।

दामोदर द्वारा किए गए प्रयास

आज से 35 साल पहले यह एक बंजर जमीन से घिरा गाँव था जिसे वर्तमान स्वरूप में बदला है दामोदर ने, सन् 2009 तक लगातार 35 वर्षों तक सन्ध करमारी गांव के सरपंच रहे। जगदलपुर छात्रावास से लौट कर उन्होंने देखा

कि जंगल के बड़े पेड़ काट दिए गए हैं और लोगों को चूल्हे में जलाने के लिए जड़ें खोदकर लानी पड़ रही है।

जहाँ भी दामोदर गए उन्हें पेड़ों के ठूँठ नजर आए। उन्होंने बताया, "यह गाँव के निस्तार के लिए भी उपयोग किया जाता था। वे सब कुछ बेच कर खा गए।" दामोदर इससे दुखी हुए और उन्होंने कुछ करने की सोची। सन् 1976–77 में उन्होंने सरपंच पद का चुनाव लड़ा और जीत गए।

चित्र 5.7 : एक अनुष्ठान जो माऊली देव में पूरा होता है।

चित्र 5.8 : माऊली कोट में तीर्थस्थल को जाता रास्ता।

जंगल की सुरक्षा के लिए कुछ लोगों को नियुक्त करना पहली ज़रूरत थी। सहायता के रूप में लोगों से उनकी जमीन के हिसाब से अनाज लिया गया। नष्ट हो चुके निस्तार के जंगल को हरा–भरा किया गया, जिसे अब 'बडला कोट' (उगाया गया वन) कहा जाने लगा। वहाँ पशु चराना बन्द किया। वन विभाग से बीज प्राप्त करके उन्होंने आम, चिरोंजी, महुआ, बीजा, साल,शतावरी, जामुन, आँवला, सफेद मूसली, काली मूसली आदि उगाए। आज 35 साल बाद यह 215 एकड़ का जंगल इस बात का प्रमाण है कि लोग अपने बल पर कितना कुछ कर सकते हैं।

सन्ध करमारी के लोगों की एक और सम्पदा है माऊली कोट–माऊली देवी का एक पवित्र जंगल। इस 100 एकड़ के पुराने जंगल में लंगूर, उड़ने वाली गिलहरी और अनेक पक्षी रहते हैं। यहाँ अनेक औषधीय वनस्पतियाँ भी मिलती हैं। यहाँ हमें पता चल सकता है कि पुराने जंगल में किस तरह की विविधता हुआ करती थी। जब दामोदर सरपंच बने तो यह जंगल भी सिकुड़ रहा था।

दामोदर की कोशिशों से लोगों ने जंगल की रक्षा करनी शुरू की। इस वन के नज़दीक के खेत लोगों ने छोड़ दिए ताकि जंगल फैल सके। यह वन बस्तर में सबसे बड़ा है।

राजनांदगांव में छा गई हरियाली

छत्तीसगढ़ के राजनांगांव जिले के वन परिक्षेत्र बाघनदी के अंतर्गत उप परिक्षेत्र छुरिया के घोघरे गाँव का जंगल जो कि कभी अवैध कटाई, उत्खनन व अनियंत्रित चराई के कारण वीरान हो रहा था। ग्रामीणों की सक्रियता व जागरूकता के चलते मनमोहक हरियाली और ताजी हवा में फूलों की खुशबू लिए यह फिर से जंगल में परिवर्तित हो गया।

चित्र 5.9 : घोघरे का जंगल हुआ आबाद

दशक पूर्व यहाँ का जंगल बेहद असुरिक्षत था। अवैध कटाई के कारण पूरा जंगल ठूंठ में तब्दील हो गया था। ऐसे समय में ग्रामीणों को जलाऊ लकड़ी और पालतू जानवरों के लिए चारा मिलना मुश्किल हो गया था। यह सब देखकर बुजुर्गों की सलाह पर ग्रामीणों ने वन विभाग के सहयोग से जंगल बचाने का बीड़ा उठाया और सयुंक्त वन प्रबंधन समिति बनाई। सैकड़ों हेक्टेयर क्षेत्र में बाँस के साथ ही अन्य औषधीय व फलदार पौधे रोपे गए। आज ये पेड़ के रूप में परिवर्तित हो गए हैं। यहाँ जंगल के पेड़ काटने की सख्त मनाही है। ग्रामीण बाहरी लोगों से जंगल को बचाने बारी–बारी रात्रि गश्त भी लगाते हैं। चौकीदार की तैनाती अलग से की गई है। ग्रामीण बताते हैं कि जंगल की सुरक्षा के दौरान उनकी जंगली सुअर, हिरण व लकड़बग्घा जैसे जानवरों से सामना भी हो जाता है। ग्रामीण न सिर्फ बाहरी लोगों से जंगल की सुरक्षा कर रहे हैं अपितु शिकारी प्रवृत्ति के लोगों से जंगली जानवरों को भी बचाने में जुटे हैं। संयुक्त वन प्रबंधन समिति के द्वारा जंगल से लगे बंजर भूमि के 50 हेक्टेयर क्षेत्र में बाँस रोपण किया गया है। इसी तरह 18 से 20 घरों वाली लोधी भर्री बस्ती के ग्रामीणों ने 50 हेक्टेयर क्षेत्र में आँवला, करंज, सागौन, बाँस के अतिरक्ति पानी वाली जगहों में अर्जुन (कहुवा), महुआ जैसे पौधे रोपे थे जो अब नियमित संरक्षण से पेड़ में परिवर्तित हो गए हैं। यहाँ चार, हर्रा, बेहरा, महुआ व वनोषधि से भरपूर पेड़–पौधे पूर्व से विकसित हैं। इस तरह से वन ग्राम के ग्रामीणों की मेहनत रंग लाई और हरियाली लौट आई है। अब ग्रामीणों को जलाऊ लकड़ी के साथ ही पशुओं के चारे के लिए भटकना नहीं पड़ता। इसी जंगल में 4 से 5 फीट ऊँची घास उगती है जिससे चारे की आपूर्ति आसानी से हो जाती है।

चित्र 5.10 : पशुओं का चारा

अगर हमारे आस–पास भी इस तरह के कोई प्रयास हुए हों तो उसके संबंध में पता करके कक्षा में चर्चा कीजिए?

अभ्यास

1. प्रशासकीय आधार पर वनों को कितने भागों में बाँटा गया है?
2. भारत में वनों को मुख्य रूप से कितने भागों में बाँटा गया है?
3. सदाबहार वन की विशेषताएँ बताएँ।
4. पतझड़ वाले वन कहाँ पाए जाते हैं और उनकी विशेष पहचान क्या है?
5. छत्तीसगढ़ के वनों में पाए जाने वाले प्रमुख वृक्षों के नाम लिखिए?
6 मानसूनी वन किसे कहते हैं? सविस्तार समझाइए।
7 वन नीति को समझाइए। वन संरक्षण के उपाय बताइए।
8 भारतीय वनों के नष्ट होने के प्रमुख कारण लिखिए।

XXVKQX

**